Vol.9 April'16 No.9
Annual Subscription : Rs 100
Rs. 10/- per copy

ब्रह्मार्पण
BRAHMARPAN

वेदोऽखिलो धर्ममूलम्

A Monthly publication of Brahmasha India Vedic Research Foundation

Brahmasha India Vedic Research Foundation
ब्रह्माशा इंडिया वैदिक रिसर्च फाउन्डेशन

आज़ादी अब ख़तरे में है

-पं. नन्दलाल निर्भय

देशवासियो! अब तो जागो क्यों सोए हो चादर तान।
आज़ादी अब खतरे में है, करो देश भारत का ध्यान।।
चरित्रवान् थे भारतवासी, हर जन के थे उच्च विचार।
ईश्वर के विश्वासी थे सब, सच्चाई का था व्यवहार।।
धर्म-कर्म की भले बुरे की, करते थे पूरी पहचान।
आजादी अब खतरे में है, करो देश भारत का ध्यान।।
अश्वपति, हरिश्चन्द्र, राम से थे इस भारत में सम्राट्।
श्री कृष्ण, अर्जुन, कर्ण से वीरों के थे न्यारे ठाट।।
सत्य, सादगी, सदाचार था, उन योद्धाओं की पहचान।
आज़ादी अब खतरे में है, करो देश भारत का ध्यान।।
राणा भीमसिंह साँगा, प्रताप, शिवा थे बाँके वीर।
आन-बान पर मिटने वाले, वीर हुए गौरा हम्मीर।।
तेग बहादुर, गोविन्द सिंह, रणजीत सिंह, नलवा रणधीर।
देश-द्रोही हत्यारों का वे देते थे सीना चीर।।
बन्दा वैरागी बलिदानी, भारत का था पुत्र महान।
आज़ादी अब खतरे में है, करो देश भारत का ध्यान।।
ऋषियों के प्यारे भारत में है अब उग्रवाद का जोर।
गौ हत्या हो रही रात-दिन, मारे जाते तीतर, मोर।।
पनप गया आतंकवाद अब मौज उड़ाते डाकू चोर।
अबलाओं की लाज रही लुट, पाप यहाँ होता है घोर।।
घोटालों का यहाँ जोर है, व्याकुल हैं वैदिक विद्वान।
आज़ादी अब खतरे में है, करो देश भारत का ध्यान।।
वीर शहीदों की कुर्बानी, भूल गए अब शासक लोग।
छीना झपटी मचा रहे हैं, लगा बुरा कुर्सी का रोग।।
अँगड़ाई लो बढ़ा समर में करो धर्म के मित्रो! काम।
बिस्मिल, शेखर, भगत सिंह बन, ऊँचा करो देश का नाम।।
'नन्द लाल' ऋषि दयानंद के गाओ तुम, निशिदिन गुणगान।
आज़ादी अब खतरे में है, करो देश भारत का ध्यान।।

आर्य सदन, बहीन जनपद, पलवल (हरियाणा)

BRAHMASHA INDIA VEDIC RESEARCH FOUNDATION

C2A/58, Janakpuri,
New Delhi-110058
Tel :- 25525128, 9313749812
email:deeukhal@yahoo.co.uk
brahmasha@gmail.com
Website : www.thearyasamaj.org
of Delhi Arya Pratinidhi Sabha

Sh. B.D. Ukhul
Secretary
Dr. B.B. Vidyalankar 0124-4948597
President
Col.(Dr.) Dalmir Singh (Retd.)
V.President
Dr. Mahendra Gupta *V.President*
Ms. Deepti Malhotra
Treasurer
Editorial Board
Dr. Bharat Bhushan Vidyalankar,
Editor
Dr. Harish Chandra
Dr. Mahendra Gupta
Acharya Gyaneshwararya

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्याय क्षेत्र दिल्ली ही होगा।

Printed & Published by
B.D. Ukhul for Brahmasha India Vedic Research Foundation
Under D.C.P.
License No. F2 (B-39) Press/ 2007
R.N.I. Reg. No. DELBIL/ 2007/22062
Price : Rs. 10.00 per copy
Annual Subscription : Rs. 100.00

Brahmarpan April' 16 Vol. 9 No.9
चैत्र-बैशाख 2072-73 वि.संवत्

ब्रह्मार्पण
BRAHMARPAN

A bilingual Publication of Brahmasha India Vedic Research Foundation

CONTENTS

1. आज़ादी अब ख़तरे में है 2
-पं. नन्दलाल निर्भय
2. संपादकीय 4
3. सांख्य दर्शन 7
-डॉ. भारत भूषण
4. पं. लेखराम आर्य मुसाफिर 8
5. संकल्प शक्ति 12
-डॉ. रघुवीर वेदालंकार
6. वराहमिहीर 16
7. Lest we forget 17
-Kewal Alhuwalia
8. शहीद-ए-आज़म की जर्मी का एक सफर(I) *18*
9. भाई का दर्द (II) *20*
-वरुण वागीश
10. मुझे गर्व है कि मैं 'इण्डियन' नहीं हूँ 21
-हेमचन्द्र बहुगुणा 'अजय'
11. महान स्वातंत्र्य सेनानी-सं. अजितसिंह
-विजन्द्र सिंघल 23
12. मार्टिन लूथर बनाम दयानन्द 26
-फान् फार्श्वेनी
13 The Horried Massacre of Hindus and Sikhs in Pre-Partition India 31
-N.K. Chowdhry
14 Is Rebirth Fact or Fiction? 34
Only investigation can tell,

संपादकीय

क्या हमारे विश्वविद्यालय विद्या के मंदिर है या राजनीति के अखाड़े?

हमारे विश्वविद्यालय जो विद्या के मंदिर समझे जाते थे वे आज राजनीति के अखाड़े बने हुए हैं। भारत में पहले हजारों छात्र विदेशों से यहाँ तक्षशिला, नालंदा जैसे विश्व विद्यालयों में शिक्षा ग्रहण करने आते थे उसी देश में, जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय, हैदराबाद केन्द्रीय विश्वविद्यालय और जादवपुर विश्वविद्यालय असामाजिक तत्वों, उग्रवादियों और कम्युनिस्ट विचारधारा वाले राजनीतिज्ञों के अड्डे बन गए हैं। हैदराबाद सेंट्रल यूनिवर्सिटी से पी. एच डी. कर रहे एक छात्र रोहित वेमुला ने 17 जनवरी की रात को अपने कमरे में फाँसी लगाकर आत्महत्य। कर ली। आत्महत्या करने वाला छात्र क्योंकि दलित था इसलिए दलित वर्ग की सहानुभूति बटोरने के लिए विभिन्न राजनीतिक दलों के नेता, छात्र संगठन और मीडिया इस राजनीति के अखाड़े में कूद पड़े। इसके विरोधी छात्र संगठनों का कहना है कि जब आतंकी याकूब मेनन को फाँसी दी गई तो अम्बेडकर स्टूडेन्ट्स ऐसोसिएशन नामक छात्र संगठन ने इसके विरुद्ध प्रदर्शन किया जिसका नेतृत्व रोहित वेमुला कर रहे थे। हैदराबाद विश्वविद्यालय परिसर में जब अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद के अध्यक्ष सुशील कुमार ने इसके विरुद्ध आन्दोलन किया तो उनके साथ मार-पीट की गई। अतः उन्हें अस्पताल में भर्ती करवाना पड़ा।

देश की राजनीति में जातिवाद का घुन ऐसा लगा है कि तथाकथित दलित छात्र की आत्महत्या ने सारे देश को हिलाकर रख दिया। यों देश में प्रतिदिन कितने ही छात्र मरते हैं परन्तु उनके लिए किसी को चिंता नहीं होती। परन्तु यहाँ प्रश्न जातिवाद का है और नेताओं को चिन्ता अपने वोट बैंक की है तो क्यों न इसका भरसक लाभ उठाया जाए। इस दलित की आत्महत्या की चिनगारी जंगल की आग की तरह दिल्ली

के जे. एन. यू., जादवपुर यूनिवर्सिटी और दूसरे शिक्षा संस्थानों में फैल गई और पूरे देश में प्रदर्शनों का दौर शुरू हो गया। वेमुला की आत्महत्या की पृष्ठभूमि हैदराबाद केन्द्रीय विश्व विद्‌यालय में जातिवादी, असामाजिक, राष्ट्रविरोधी गतिविधियों को रोकने के लिए केन्द्रीय मंत्रियों द्वारा वाइस चांसलर को आगाह किया गया तथा इस विषय में संबंधित छात्रों को चेतावनी दी गई। इसलिए केन्द्रीय सरकार के दो मंत्रियों ने कुछ दलित छात्रों के विरुद्ध कार्रवाही करने की चिट्ठी लिखी थी। इन पर अपने ही विश्वविद्यालय के अ.भा.वि.परिषद से जुड़े छात्र पर हमला करने का भी आरोप था। यहाँ यह भी संकेत कर दें कि रोहित ने अपने सुसाइड नोट में आत्महत्या के लिए किसी को दोषी नहीं ठहराया था। फिर भी इसकी प्रतिक्रिया पूरे देश में दिखाई दी।

हैदराबाद केंद्रीय विश्वविद्यालय की इस घटना के बाद 9 फरवरी को जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय में वहाँ के कुछ असामाजिक, राष्ट्रविरोधी, साम्यवादी विचारधारा वाले, उग्रवाद समर्थक छात्रों ने जे.एन.यू. और कुछ बाहरी तत्वों की मदद से अफजल गुरु जिसने संसद भवन पर हमले की साजिश की थी फाँसी की तीसरी बरसी मनाई। छात्रसंघ के अध्यक्ष कन्हैया कुमार के अनुसार इस कार्यक्रम का आयोजन सैयद उमर खालिद द्वारा किया था। खालिद उमर का संपर्क कई कश्मीरी अलगाववादियों के साथ है। इस कार्यक्रम के दौरान भारत के टुकड़े करने, भारत को बरबाद करने, अफजल गुरु की शहादत, कितने अफजल और मकबूल मारोगे, उतने ही अफजल गुरु और मकबूल पैदा होंगे। लड़के लेंगे आजादी, बंदूक के दम पर, आजादी आदि। नारे लगा रहे थे। तेलंगाना पुलिस के अनुसार वेमुला दलित नहीं था। वह पिछले वर्ग से था, उसकी जाति वडेरा थी। जेएनयू के उन लड़कों में कश्मीर की जनता जंग करो, हम तुम्हारे साथ हैं आदि नारे लगाने वालों में आठ-दस कश्मीरी युवक भी थे जिन्होंने अपने चेहरे ढक रखे थे। वे पाकिस्तान जिंदाबाद के नारे भी लगा रहे थे। इसी तरह का देशद्रोह का आयोजन जादवपुर विश्वविद्‌यालय

में भी हुआ था। सरकारी सूत्रों के अनुसार जे.एन.यू. में 9 फरवरी को कल्चरल प्रोग्राम की आड़ में हुए कार्यक्रम की योजना पाकिस्तान में बनी थी।

बड़े आश्चर्य की बात है कि जे. एन. यू. के इस देशद्रोही प्रोटेस्ट वाली मीटिंग में कांग्रेस उपाध्यक्ष राहुल गाँधी, लेफ्ट के नेता सीताराम येचुरी, डी. राजा, कांग्रेस के आनन्द शर्मा, अजय माकन, दिल्ली के मुख्यमंत्री श्री केजरीवाल आदि नेता भाग लेकर महौल को गरमा रहे थे। यदि देशद्रोह का मुकद्दमा जे.एन.यू. के छात्रों पर चले तो इन राजनीतिक नेताओं पर भी देशद्रोह का अभियोग चलाया जाना चाहिए क्योंकि ये राष्ट्रविरोधी आंदोलनों में अपनी सियासी रोटी सेंकना चाहते हैं। जे.एन.यू. में आंदोलन पर रोक लगाने के बाद दिल्ली विश्वविद्‌यालय के प्रो. एस. ए. आर. गिलानी ने डी.यू. के अली जावेद के सहयोग से प्रेस क्लब में सभा के लिए कमरा बुक कराया। इस कार्य में मुदस्सर भी शामिल थे। वहाँ भी कश्मीरी युवकों ने देशद्रोही नारे लगाए। जे.एन.यू. की ऐसी बुरी हालत को देखकर सुब्रह्मण्यम् स्वामी ने विश्वविद्यालय को बंद करने और ऐसे छात्रों को यूनिवर्सिटी से निकालने की माँग की जिनके जिहादियों, नक्सलियों और आतंकवादियों से जुड़ाव हैं। जे.एन.यू. यूनिवर्सिटी की स्टूडेंट यूनियन के अध्यक्ष कन्हैया कुमार को 3 मार्च को रिहा कर दिया गया। शर्त यह थी कि भविष्य में देश विरोधी आंदोलनों में भाग नहीं लेंगे और अपने साथियों को भी भाग लेने से रोकेंगे। खेद की बात कि रिहा होते ही वे सारी रात जश्न मनाते रहे और प्रधानमंत्री के विरुद्ध ताने मारते रहे। देखिये आगे क्या होता है। जे एन यू के ऐसे माहौल का प्रभाव विदेशों की शिक्षण संस्थाओं पर भी पड़ रहा है। अन्तर्राष्ट्रीय विश्वविद्‌यलयों के लगभग 450 शिक्षाविदों ने जे. एन. यू. के वातावरण को सुव्यवस्थित करने का आग्रह किया है। हम भी आशा करते हैं कि शीघ्र ही जे. एन.यू. की स्थिति सामान्य हो जाएगी और राजनीतिक दल भी देश हित में इसमें सहयोग करेंगे।

सांख्य दर्शन (अध्याय-1, सूत्र-99)

-डॉ. भारत भूषण विद्यालंकार

पूर्वसूत्र की अनुवृत्ति में यदि महत् आदि को अकार्य मानें तो उन्हें प्रकृति-पुरुष से अतिरिक्त मानना पड़ेगा। इस विषय में सूत्रकार अपना मन्तव्य अगले सूत्र में देते हैं। सूत्र है-

तयोरन्यत्वे तुच्छत्वम् ।।99।।

अर्थ - (तयोः) उन दोनों से (अन्यत्वे) अन्य होने पर (तुच्छत्वम्) तुच्छ है।

भावार्थ- अकार्य रूप में प्रकृति और पुरुष के अतिरिक्त किसी भी वस्तु का अभाव ही स्वीकार करना होगा, क्योंकि मूल रूप से चेतन और अचेतन अर्थात् पुरुष और प्रकृति के बिना अन्य किसी तत्व का अस्तित्व संभव नहीं है। परन्तु महत् आदि के अस्तित्व को हम अनुभव करते हैं। अतः इन्हें कार्य माना जा सकता है, अन्य कुछ नहीं। ।।99।।

(FORM IV) STATEMENT ABOUT OWNERSHIP AND OTHER PARTICULARS ABOUT "BRAHMARPAN"

Place of Publication and Address: New Delhi, C2A/58, Janakpuri, New Delhi-110058.

Periodicity : Monthly, A bi-lingual publication (Hindi and English)

Printers' name, citizenship and Address: B.D. Ukhul, Indian, C2A/58, Janakpuri, New Delhi-110058.

Publishers' name, citizenship and Address: B.D. Ukhul, Indian, C2A/58, Janakpuri, New Delhi-1100058.

Editor's name, citizenship and Address: Dr. Bharat Bhushan Vidyalankar, Indian, C2A/90, Janakpuri, New Delhi-110058.

Name and Address of owner: M/s. Brahmasha India Vedic Research Foundation, C2A/58, Janakpuri, New Delhi-110058.

Printing Press: Friends Printofast , 6, A5B/A5C Market, Janakpuri, New Delhi-110058.

DCP License No. F2(B-39) Press/2007

I, B.D.Ukhul, hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

31.03.2016 Sd/- B.D.Ukhul

पं. लेखराम आर्य मुसाफिर

पं. लेखराम आर्यसमाज को नए आयाम देने वाले महापुरुषों में से एक हैं। महात्मा मुन्शीराम, पं. लेखराम और पं. गुरुदत्त विद्यार्थी–ये तीनों आर्यसमाज की महान् विभूतियाँ हैं। ये तीनों समकालीन भी थे। महात्मा मुन्शीराम (स्वामी श्रद्धानन्द) और पं. लेखराम का लम्बे समय तक साथ रहा। वैदिक धर्म के प्रचार में, आर्यसमाजों में भाषण देने के लिए अनेक स्थानों पर ये दोनों साथ जाया करते थे। पं. लेखराम ने वैदिक धर्म का तो गहन अध्ययन किया ही था, उन्होंने अन्य मतावलम्बियों की मान्यताओं एवं प्रतीकों का भी गम्भीर अध्ययन किया था। पं. लेखराम शास्त्रार्थ महारथी थे और शास्त्रार्थ महारथी के लिए यह आवश्यक है कि वह अपने पक्ष का मण्डन करने के लिए सुव्यवस्थित प्रमाणों के सन्दर्भ दे; साथ ही विपक्षी के मत का खण्डन करने के लिए भी प्रबल एवं शक्तिशाली प्रमाण जुटाए। धर्मवीर पं. लेखराम का 'कुलियात आर्य मुसाफिर' एक ऐसा ही संदर्भ ग्रन्थ है, जो आर्य संस्कृति की रक्षा का अमोघ अस्त्र है।

यद्यपि पं. लेखराम सभी धर्मों का समान खण्डन-मण्डन करते थे, फिर भी सनातन, जैनियों और सिखों को उनके प्रति कोई शिकायत न थी। वे पं. लेखराम की सुधारवादी प्रवृत्ति से भलीभाँति परिचित थे। एक बार पं. लेखराम और स्वामी श्रद्धानंद जी की भेंट सनातन धर्म के नेता और महोपदेशक पंडित दीनदयाल जी से हुई। पंडित लेखराम जी ने उन्हें कहा कि आप हमें कोसने में तो सदा लगे रहते हैं, परन्तु उन मुसलमानों और ईसाइयों को कुछ नहीं कहते जो आपकी जड़ें खोदने में लगे हैं। इस पर पं. दीनदयाल जी बोले कि वे हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकते। जब तक पं. लेखराम जीवित हैं, हमारी जड़ें कौन खोखली कर सकता है। निस्सन्देह यह बात सत्य है कि सत्य सनातन वैदिक धर्म की मान्यताओं का पोषण करने और विकृतियों का सुधार करने में ही तो पं.

लेखराम लगे थे। वे भारतीय धर्म और संस्कृति के अप्रतिम रक्षक थे। वे भारतीय मनीषा के संवाहक थे। ऐसा महान् व्यक्ति धन्य है जिसके सद्गुणों का गान विरोधी भी करें। यही तो आर्यसमाज का कर्तव्य है। आर्यसमाज ने किसी भी प्रकार की पोंगापंथी को बढ़ावा नहीं दिया, बल्कि सत्य को ही सत्य माना। इससे चाहे कोई राजा रूठे या लाट साहब गुस्सा हों। इसी स्पष्टवादिता के कारण आर्यसमाज का ध्वज ऊपर और ऊपर हुआ।

पं. लेखराम ने लगभग 33 पुस्तकें लिखकर अपने नाम को सार्थक किया था। पं. जी ने कई पुस्तकों का अरबी भाषा में भी अनुवाद किया था। उनके ऊपर अनेक मुकद्दमे भी चलाये गये, पर वे सभी में ससम्मान विजयी हुए। आप निस्पृह त्याग और सन्तोषशीलता के पर्याय थे। आप धर्मरक्षा के लिए अहर्निश तत्पर रहते थे। एक बार कर्तव्यनिष्ठ, ध्येयनिष्ठ पं. लेखराम के इकलौते पुत्र का निधन हो गया था तथापि वे यथासमय वजीराबाद आर्यसमाज के वार्षिकोत्सव पर पहुँचे।

पं. लेखराम का जन्म चैत्र 8, विक्रमी संवत् 1915 को मेहता तारासिंह के घर में ग्राम सैयदपुर, जेहलम तहसील में हुआ था। उन्होंने उर्दू और फारसी का अध्ययन किया तथा 21 दिसम्बर 1875 को पुलिस में नौकरी कर ली। उस समय उनकी आयु लगभग 17 वर्ष थी। यहीं से पण्डित जी के मन में धार्मिक भावनाएँ उत्पन्न हुईं। आगे चलकर उन्होंने गीता का अध्ययन किया। उसके बाद श्री पं. कन्हैयालाल अलखधारी की पुस्तकें पढ़ीं। उसी समय उन्हें ऋषि दयानन्द के सम्बन्ध में जानकारी मिली। उन्होंने ऋषि प्रणीत ग्रन्थों को पढ़ा और बस वे वैदिक धर्म के सच्चे अनुयायी और ऋषि दयानन्द के अनन्य भक्त बन गए। संवत् 1937 में उन्होंने पेशावर में आर्यसमाज की स्थापना की। उन्हें ऋषि दर्शन की इच्छा हुई और वे अजमेर जा पहुँचे। सेठ फतेहमल की वाटिका में उन्होंने महर्षि दयानन्द के दर्शन किए। उन्होंने ऋषि से

वार्तालाप किया और बस वे तो वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार की प्रेरणा लेकर ही वहाँ से लौटे। उन्होंने 'धर्मोपदेश' नामक मासिक पत्र प्रारम्भ किया।

पंडित जी ने लिखना प्रारम्भ किया। केवल लेखन से वैदिक धर्म का प्रचार संभव न था। उन्होंने व्याख्यान देना भी प्रारम्भ किया। उनके भाषण प्रभावशाली होते थे। उनके व्याख्यान से प्रभावित होकर एक कप्तान ने अपनी सेना से शराब पीना बिल्कुल निषिद्ध कर दिया यह उनके व्याख्यानों का ही प्रभाव था।

आर्य संस्कृति के संवाहक पं. लेखराम के जीवन के अनेक प्रेरक प्रसंग, सोती आर्य जनता की रगों में उष्ण रक्त धारा के प्रवाहित करने में सक्षम थे। एक बार उन्हें पता लगा कि मिर्जा गुलाम कादियानी के प्रभाव में आकर, इनके चेले हकीम नूरुद्दीन की संगत से जम्बू के ठाकुरदास नामक हिन्दू मुसलमान बनने को तैयार हो रहे हैं। बस पं. लेखराम वहाँ जा पहुँचे और उनके हिन्दुत्व के विचारों को दृढ़तर किया। पं. लेखराम का प्रत्येक क्षण आर्य संस्कृति और वैदिक धर्मियों के हित में ही बीतता था। मिर्जा गुलाम अहमद कादियानी ने अपनी एक पुस्तक 'बुराहीन अहमदिया' के चौथे भाग में आर्य सिद्धान्तों पर आक्रमण किया था। पं. लेखराम ने उनका मुँहतोड़ जवाब दिया।

पं. लेखराम को आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब द्वारा महर्षि दयानन्द सरस्वती का जीवन-चरित्र लिखने का कार्य सौंपा गया था। इस कार्य को पूरा करने में उन्होंने लगभग उन सभी स्थानों की यात्राएँ की, जहाँ-जहाँ स्वामी जी महाराज गए थे। उन्होंने स्वामी जी के पत्रों, लेखों और ग्रन्थों का आलोडन-विलोडन किया। उन्होंने स्वामी जी के समकालीन लोगों से मिलकर प्रामाणिक सामग्री एकत्रित की। यह श्रमसाध्य कार्य था, जो उन्होंने पूरा किया। साथ ही उन्होंने प्रचार-कार्य को भी नहीं छोड़ा। वे आर्यसमाजों में व्याख्यान देने के लिए भी जाया

करते थे, लिखते भी और स्वाध्याय भी करते थे। शुद्धि के काम में वे सदा अग्रणी रहते थे। पं. लेखराम ने आर्यजनों को प्रेरित करते हुए कहा था कि आर्यसमाज से तहरीर (लेख) और तकरीर (उपदेश) का काम बन्द नहीं होना चाहिए।
उनकी दिनचर्या में केवल अपने धर्मग्रन्थों का ही अध्ययन नहीं था, अपितु अन्य मतों के ग्रन्थों का अध्ययन भी था। वे निरे कूप मंडूक न थे। वे उदार थे व स्वमत मंडन के लिए तथा परमत खंडन के लिए वे अपने ज्ञान धन को अद्यतन रखते थे। विद्वानों की यही तो सम्पदा होती है और पं. जी इस विद्या में पारंगत थे। एक बार पं. लेखराम व्याख्यान दे रहे थे। उन्होंने एक आयत पढ़ी जिसका अर्थ था-मैं खुदा के नूर से हूँ। और इस पर एक कवि का वचन पढ़ा-जिसका तात्पर्य यह है कि यद्यपि मुहम्मद ब्रह्म के प्रकाश से जुदा प्रतीत होता है, परन्तु वह है वही ब्रह्म। मुसलमानों की जमात में से एक युवक से न रहा गया। वह चीखकर बोला- 'काफिरों को काटने वाली मुहम्मदी शमशीर को मत भूल। पं. लेखराम एक पल के लिए रुक गए फिर जिधर से शब्द सुने थे, उधर आँखें घुमाकर सिंहनाद किया-'मुझे बुझदिल मुहम्मदी तलवार की धमकी देता है। मैंने अधर्मी निर्बल मनुष्यों से डरना नहीं सीखा, जानते नहीं हो। मैं जान हथेली पर लिए फिरता हूँ। सारे हाल में सन्नाटा छा गया।
वे धर्मवीर पं. लेखराम 6 मार्च 1897 को एक धर्मान्ध की छुरी का शिकार हो गए। पं. लेखराम इस संसार से विदा हो गए पर उन्होंने आर्यों के अन्दर उत्साह और जीवन्तता कूट-कूटकर भर दी थी। आर्यसमाज के इतिहास में आर्य संस्कृति का रक्षक पं. लेखराम सदा अमर रहेगा।

संकल्प शक्ति

-डॉ. रघुवीर वेदालंकार
(पूर्व ऐसो. प्रो. रामजस कॉलेज, दिल्ली वि. विद्यालय)

दर्शनशास्त्र में 'सङ्कल्पविकल्पात्कं मनः' कहा गया है अर्थात् मन का स्वरूप संकल्प तथा विकल्प वाला है। सुदृढ़ इच्छा शक्ति का नाम ही संकल्प है। यही होगा, मैं यही करूँगा या नहीं करूँगा, इस प्रकार का विचार जो अवश्य ही पूर्ण हो संकल्प कहलाता है, किन्तु जब इसमें कोई तर्क-वितर्क, संशय उत्पन्न होने लगे कि यह कार्य होगा या नहीं, मैं इसे कर भी सकूँगा या नहीं, इसे ही विकल्प कहते हैं। ये दोनों मन के ही धर्म हैं किन्तु एक दूसरे के विपरीत हैं। सङ्कल्पित कार्य अवश्य ही पूर्ण होता है जबकि विकल्पित कार्य के विषय में ऐसा नहीं है। संकल्प के बल पर कभी-कभी ऐसे आश्चर्यजनक कार्य भी किये जाते हैं जो कि सुनने में भी असम्भव लगते हैं। अथर्ववेद 19/4/2 में इसे 'आकूति देवी' नाम दिया गया है तथा कहा गया है कि यह मन में छिपी रहती है। मैं अपनी इस सङ्कल्पशक्ति को जानूँ, यह मानूँ **आकूतिं देवीं सुभगां पुरोदधे... विदेयमेनां मनसि प्रविष्टाम्**। अपनी इस संकल्पशक्ति को प्रबुद्ध करके, इसे पहचान कर व्यक्ति ऐसे कार्य भी कर देता है जो सुनने में भी असम्भव लगते हैं। उपनिषदों में सङ्कल्प के आधार पर होने वाली सफलता को इस प्रकार समझाया गया है-

यन्मनसा ध्यायति तद् वाचा वदति। यद् वाचा वदति तत् कर्मणा करोति।

यत् कर्मणा करोति तदभिसम्पद्यते।

अर्थात् व्यक्ति जैसा भी चिन्तन मन में करता है, वैसा ही वाणी से बोलता है। जैसा चिन्तन मन से करता है, वैसा ही कर्म वह करता है तथा जैसा वाणी से बोलता है, वैसा ही कर्म वह करता है तथा जैसा कर्म करता है, वह वैसा ही बन जाता है अर्थात् अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेता है। दृढ़ संकल्प करने पर यह विचार आता ही नहीं कि यह कार्य होगा भी या नहीं, मैं इसे कर भी सकूँगा या नहीं। यदि यह विचार आ गया तो यह संकल्प नहीं, अपितु विकल्प होगा तथा यही विकल्प आपको अपना लक्ष्य पाने से रोक देता है।

मनुष्य के मन में अनन्त शक्तियाँ हैं। हम उनसे या तो बे-खबर रहते हैं या अपने प्रमाद-आलस्यादि दोषों के कारण उनका उचित उपयोग नहीं कर पाते। इस विषय में विलियम जेम्स कहते हैं-

"अपने जीवन में हम मानसिक एवं शारीरिक शक्तियों का बहुत कम उपयोग कर पाते हैं। हमें जैसा उन्नत और विकसित होना चाहिए, हम उसके आधे ही विकसित रहते हैं। तथा अपनी शक्तियों का पूरा पूरा उपयोग किये बिना मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं।"

संसार में जिन्होंने अपनी इस शक्ति का उपयोग किया है, उन्हें अद्‌भुत सफलता मिली है। एक उदाहरण लीजिए- इंग्लैण्ड में अपनी सेनाएँ उतारते समय जूलियस सीजर ने संकल्प कर लिया था कि बिना विजय प्राप्त किए वापस नहीं जाना है। उसने सेना के सामने ही उन जहाजों को जलवा दिया जिनके द्वारा सैनिकों को वापस जाना था। अब एक ओर मृत्यु थी तो दूसरी ओर विजय। सैनिक वापस नहीं लौट सकते थे, इसलिए वे पूरी शक्ति से लड़े तथा विजय प्राप्त की। इस विजय ने सीजर को विश्व का एक महान् विजेता बना दिया। ऐसी संकल्प शक्ति को महाकवि जयशंकर प्रसाद के शब्दों में इस प्रकार कहेंगे- "वह महाशक्ति उठ खड़ी हुई अपने आलस का त्याग किए।"

इसी विषय में 18-1-1976 के 'नवभारत टाइम्स' में श्री आनन्द स्वरूप भटनागर का एक लेख छपा था- 'मानवीय चेतना शक्ति के चमत्कार'। इसमें लेखक ने लिखा था "युरीगेलर नामक व्यक्ति ने मानवीय चेतना का अजीबोगरीब विचार पेश किया है। उसका दावा है कि मानवीय चेतना और प्राणवान कल्पना शक्ति भौतिक जगत् पर नियन्त्रण कर सकती है। इसे प्रमाणित करने के लिए उसने एक प्रदर्शन में अपनी इच्छा शक्ति के प्रयोग से एक मजबूत अंगूठी के दो टुकड़े कर दिए।"

इस प्रकार निःसंदेह कहा जा सकता है कि व्यक्ति के मन में संकल्प रूपी महान दैवीय शक्ति छिपी पड़ी है। आवश्यकता है उसे पहचान कर उससे कार्य लेने की। यहाँ यह भी ध्यान रखना है कि संकल्प अच्छा तथा बुरा भी हो सकता है। जैसा भी सङ्कल्प होगा, व्यक्ति वैसा ही कार्य करेगा तथा वैसा ही

बन जाएगा। इसीलिए यजुर्वेद के शिव संकल्प सूक्त में बार-बार दोहराया गया है- **तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु।** अर्थात् मेरा मन शिव संकल्प वाला ही हो।

सङ्कल्प के द्वारा जीवन में तो अद्भुत आश्चर्यजनक कार्य किये ही जा सकते हैं। संकल्प के आधार पर दीर्घजीवन भी प्राप्त किया जा सकता है। मृत्यु को परे धकेलते हुए व्यक्ति संकल्प के द्वारा अपनी आयुवृद्धि कर सकता है। इसके लिए अटूट संकल्प होना चाहिए। अथर्ववेद में ऐसे संकल्प की पर्वत से उपमा देते हुए कहा गया है कि सौ वर्ष तक जीवित रहते हुए तुम पर्वत के द्वारा अपनी मृत्यु को छिपा दो अर्थात् दूर कर दो **शतं जीवन्तः शरदः पुरूची क्षिते मृत्युं दधता पर्वतेन** (अ.12/2/3) इसका आशय यही है कि हमारा संकल्प पर्वत के समान अडिग होना चाहिए। जिस प्रकार पर्वत की ओट में वस्तुएँ छिप जाती हैं, उसी प्रकार दृढ़ संकल्प के आगे मृत्यु छिप जायेगी, दूर चली जायेगी।

आयु वृद्धि के लिए दृढ़ संकल्प करके संकल्प कर्ता को इस मंत्र का जप मनोयोग पूर्वक करना चाहिए। **अहमिन्द्रो न पराजिग्ये न मृत्यवे अवतस्थे कदाचन।** मैं 'इन्द्र' अर्थात् अतुलित शक्ति संपन्न हूँ। अतः मृत्यु के लिए नहीं हूँ। यदि कभी मृत्यु की आहट सुनायी भी पड़े तो उसे पूर्ण शक्ति एवं संकल्पपूर्वक ललकारते हुए कहना चाहिए-

परं मृत्योरनुपरेहि पन्थां यस्त इतरो देवयानात्। अथर्व. 12/1।21 हे मृत्यु तू यहाँ से चली जा तथा देवयान पथ से भिन्न जो दूसरा पितृयाण मार्ग है, उस पर तू जा। मैं देवयान पथ का पथिक हूँ। यहाँ तेरा कोई काम नहीं। इससे यह भी ध्वनित होता है कि मृत्यु को दूर करने तथा आयु वृद्धि के लिए व्यक्ति को देवयान मार्ग का पथिक बनना ही पड़ेगा। जिन व्यक्तियों ने अपने संकल्प के बल पर दीर्घजीवन प्राप्त किया वे देवयान पथ के ही पथिक थे। यहाँ उनके उदाहरण दिये जाते हैं- उपनिषदों में कथा आती है कि इतरा नामक स्त्री के पुत्र ऐतरय महीदास ने संकल्प किया कि 116 वर्ष तक यज्ञ करता रहूँगा।

शतं जीवन्तः शरदः पुरूची क्षिते मृत्युं दधता पर्वतेन। अथर्व 12/2/3 ऋषि का यह संकल्प पूर्ण हुआ तथा वे इतने शक्तिवान् रहे कि एक सौ सोलहवें वर्ष में भी यज्ञ कर सके।

दूसरा उदाहरण देखिए महाराष्ट्र के औंध जिले के पारडी नामक स्थान पर वेदमूर्ति पं. दामोदर सातवलेकर वेदों पर कार्य कर रहे थे। उन्होंने पढ़ा कि वेदों में मनुष्य की आयु न्यूनतम सौ वर्ष कही गई है। पण्डितजी ने तभी संकल्प किया कि मैं भी अवश्य ही सौ वर्ष की आयु प्राप्त करूँगा तथा संयोग देखिए कि पण्डित जी ने एक सौ पाँच वर्ष की आयु प्राप्त की।

मृत्यु की आहट – मृत्यु अचानक ही नहीं आ खड़ी होती। यद्यपि कुछ उदाहरण ऐसे भी हैं कि पूर्ण स्वस्थ तथा युवा व्यक्ति को भी अचानक ही मृत्यु आ घेरती है। ऐसे उदाहरणों में कुछ नहीं किया जा सकता। ऐसे व्यक्ति अपनी सुनिश्चित मृत्यु को कभी भी कहीं भी प्राप्त कर लेते हैं। इनकी आयु को नहीं बढ़ाया जा सकता। आयुवृद्धि की बात वहीं सार्थक है जहाँ व्यक्ति धीरे-धीरे वृद्धावस्था तथा मृत्यु की ओर बढ़ रहा हो। ऐसी अवस्था में मरणासन्न व्यक्ति में मृत्यु के चिह्न प्रकट होने लगते हैं। आयु वृद्धि के साथ-साथ बाल सफेद होना, शरीर तथा इन्द्रियों का शिथिल होना, शरीर की अशक्ति ये सभी मृत्यु के ही चिह्न हैं जिनके द्वारा मृत्यु एक-एक कदम हमारी ओर बढ़ी चली आती है। वेद कहता है कि मृत्यु के इन पदचिह्नों को पीछे हटाते हुए तथा दीर्घ जीवन प्राप्त करते हुए हम जीवित रहें।

मृत्योः पदं योपयन्तः एत द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः।
आसीना मृत्युं नुदता सधस्थेऽथ जीवासो विदथावदेम अथर्व.12/2/3

दीर्घ जीवन का अर्थ मृत्यु को यथाशक्ति दूर रखना है तथा यह सम्भव भी है। इसके लिए व्यक्ति को दृढ़ संकल्प लेना होगा। ऐसा संकल्प जो विपरीत परिस्थिति में भी शिथिल न हो, ऐसा संकल्प जिस पर कभी संदेह की परत न चढ़ जाए, ऐसा संकल्प जो विरोधियों द्वारा उपहास किये जाने पर भी स्थिर रहे, ऐसा संकल्प जिसमें अपने लक्ष्य को पूर्ण करने की छटपटाहट हो। संकल्प में सन्देह तथा अविश्वास के लिए कोई स्थान नहीं है। पं. सातवलेकर लिखते हैं जिस समय मनुष्य के मन में अपनी शक्ति के विषय में सन्देह उत्पन्न होता है उस समय उसकी सम्पूर्ण शक्ति नष्ट होने लगती है। अतः संकल्प के साथ उसके प्रति श्रद्धा विश्वास भी आवश्यक है। इनसे संकल्प दृढतर होता है।

वराहमिहिर

वराहमिहिर का जन्म मध्यप्रदेश के उज्जयिनी नामक नगर में हुआ था। आपका जन्मकाल सन् 499 अर्थात् वि. सं. 556 के आस-पास होने का अनुमान किया जाता है। आपके पिता आदित्यदास तथा माता सत्यवती थीं। सम्राट् विक्रमादित्य आपके ज्योतिष ज्ञान से अत्यन्त प्रभावित थे। यही कारण है कि सम्राट् ने अपने दरबार में नवरत्नों में उन्हें स्थान दिया था। इनके अलावा विक्रमादित्य के नवरत्नों में कालीदास, वैतालभट्ट, धन्वन्तरि, क्षपणक, अमरसिंह, घरखर्पक, वररुचि एवं शंकु थे।

वराहमिहिर महान् गणितज्ञ आर्यभट्ट के समकालीन उनसे 24 वर्ष छोटे थे। आपने ज्योतिष के क्षेत्र में अनेक नए शोध किए। आपने ज्योतिष के अनेक ग्रन्थों की रचना भी की। आपका प्रसिद्ध ग्रन्थ 'पंचसिद्धान्त' है। ज्योतिष विषय के इस ग्रन्थ में वराहमिहिर ने ज्योतिष के प्राचीन सिद्धान्तों के महत्त्व के साथ-साथ नए शोध भी प्रतिपादित किए हैं। 562 वि.सं. अर्थात् सन् 505 में इस ग्रन्थ की रचना हुई होगी ऐसा माना जाता है।

वराहमिहिर ज्योतिष के साथ-साथ खगोलविज्ञान के भी विद्वान् थे। इस शास्त्र को आजकल 'एस्ट्रोनोमी' कहा जाता है। 'पंचसिद्धान्त' के प्रथम भाग में खगोल विज्ञान पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है।

वराहमिहिर ने सर्वप्रथम प्रतिपादित किया था कि पृथ्वी का आकार गोल है। वराहमिहिर के समय में भारत और यूनान के बीच में घनिष्ठ मैत्री थी। यूनान के लोग विज्ञान में बहुत ही प्रगति कर रहे थे। क्योंकि वराहमिहिर जिज्ञासु और अभ्यासशील थे इसलिए उन्होंने यूनानी संस्कृति तथा ज्योतिष का गहराई से अध्ययन किया। आप यूनानी विद्वानों के विषय में लिखते हैं- "यूनानी लोग आदर के पात्र हैं, कारण

कि वे हम सबसे आगे हैं और विज्ञान में बहुत ही आगे हैं।

"पंचसिद्धान्त' के अलावा भी आपके दो महत्वपूर्ण ग्रन्थ 'बृहद् जातक' तथा 'बृहत् संहिता' हैं। इन ग्रन्थों में भौतिकशास्त्र, भूगोल, नक्षत्रविद्या, वनस्पतिविज्ञान, प्राणिशास्त्र आदि के साथ-साथ तत्कालीन सामाजिक, राजनैतिक परिस्थितियों का वर्णन भी मिलता है। इन ग्रन्थों द्वारा हमें प्राचीन भारत के वैज्ञानिक शोधों के विषय में जानने को मिलता है।

वराहमिहिर का वनस्पतिशास्त्र पर भी अद्भुत प्रभुत्व था। आपने पौधों पर होने वाले रोगों और उनकी रोकथाम के क्षेत्र में भी बहुत बड़ा कार्य किया है। गुप्तकाल के इन ज्योतिषियों (वराहमिहिर, आर्यभट्ट, ब्रह्मगुप्त) ने यह जान लिया था कि ग्रह-उपग्रह आदि नक्षत्र से परावर्तित प्रकाश से चमकते हैं। इतना ही नहीं पृथ्वी की अपनी धुरी पर घूमने की दैनिक गति को भी ये जानते थे।

Lest We Forget

-Kewal Alhuwalia

The rising of the sun on the 15th August of 1947 was only due to the blood (khoon) of those martyrs who devoted their life and paid the ultimate sacrifice of their life for the sake of India's Independence from British Rule. It took almost 100 long years (from 1857 to 1947) to get the Independence. India had given birth to lots of brave sons who sacrificed their life for the sake of this Independence. These freedom fighters came from all over the country and different states from Bengal to Punjab. Trinity of Bhagat Singh, Sukhdev and Rajguru from Punjab were executed on 23rd March 1931.

Now, the question is have we shown enough respect to their sacrifices or their sacrifices will become merely a chapter in our history books?

It is the duty of every citizen of this country to remember the freedom fighters and give them their due respect.

शहीद-ए-आज़म की जमीं का एक सफर (I)

-वरुण वागीश

बात कुछेक साल पहले की है, जब भगतसिंह पर तीन-चार फिल्में एक-साथ आई थीं। कई युवाओं को इन फिल्मों ने गहरे तक छुआ था। हम भी कॉलेज से नए-नए निकले थे। भगतसिंह के जीवन और उनकी विचारधारा से हम भी अछूते नहीं रह सके। ठान लिया कि भारत माँ के इस लाल की जमीं पर होकर आएँगे। बस निकल पड़े। दिल्ली के कश्मीरी गेट बस अड्डे से देर रात बस रवाना हुई। रोहतक, सिरसा और मुक्तसर होते हुए हम 4 युवा 23 मार्च की सुबह फिरोजपुर पहुँचे। आसमान में बिखरा केसरिया रंग, ताजी ठंडी हवा के झोंके और सबसे बढ़कर हमारी इस यात्रा का मकसद। रोमांच से रोंगटे खड़े हो रहे थे। 23 मार्च का दिन जो था। देश के उन 3 महान क्रान्तिकारियों का शहीदी दिवस, जिन्हें हम भगत सिंह, राजगुरु और सुखदेव के नाम से जानते हैं।

फिरोजपुर से करीब 10 किमी. दूर भारत-पाकिस्तान सीमा (हुसैनीवाला बॉर्डर) पर उनका समाधि स्थल बना हुआ है। लोकल बस में सवार होकर हम हुसैनीवाला की ओर चल पड़े। आँखों के सामने अब दूर तक फैले खेत-खलिहानों और छोटे-छोटे गाँव-पिंडों के नजारे थे। रास्ते में बस एक रेलवे फाटक पर रुकी। स्थानीय मुसाफिरों ने बताया कि बँटवारे से पहले यह रेललाइन फिरोजपुर से पाकिस्तान के कसूर शहर तक जाती थी। 1960-70 के दशक तक भारत-पाक के बीच हुसैनीवाला बॉर्डर ही कारोबार का प्रमुख रास्ता होता था, लेकिन बाद में इसे बंद कर अमृतसर के नजदीक वाघा बॉर्डर ने इसकी जगह ले ली।

कुछ देर बाद एक पुल आया। नीचे सतलुज बह रही थी। सन् 1931 में आज ही के दिन शाम साढ़े सात बजे के आसपास अंग्रेजों ने तीनों क्रांतिकारियों को धोखे से समय से पहले फाँसी पर लटका दिया था। जेल के बाहर लोगों को इसका पता न चल जाए, इसके लिए जेल की पिछली दीवार को तोड़कर इसी सतलुज के किनारे लाशों को जलाने की कोशिश की। हालांकि आसपास के गाँवों में खबर फैल गई। गाँववालों के पहुँचने से

पहले ही अंग्रेज भाग खड़े हुए। इसके बाद गाँव के लोगों ने पूरे सम्मान के साथ उनका अंतिम संस्कार किया। आज उसी जगह के पास समाधि स्थल बना हुआ है और वह जेल अब पाकिस्तान में है।

समाधि स्थल पर तीनों क्रांतिकारियों की मूर्तियाँ देखकर दिल में भावनाओं का ज्वार उमड़ रहा था। यहाँ भगतसिंह की माँ माता विद्यावती की समाधि भी है। पंजाब सरकार ने इस वीर जननी को 'पंजाब माता' की उपाधि दी है। शहीद बटुकेश्वर दत्त की समाधि भी यहीं है। 'शहीद दिवस' पर यहाँ विशाल आयोजन होना था। पैदल, साइकल, टैक्टर ट्रॉलियों और बसों में भरकर सैकड़ों लोग यहाँ पहुँच रहे थे। समाधि स्थल के साथ ही भारतीय सेना के बंकर बने हुए थे। यहाँ से महज आधा किमी. दूर पाकिस्तान का गाँव गंदासिंहवाला है। उधर के खेतों में काम करते किसानों को यहाँ से साफ देखा जा सकता है। वाघा की तरह हुसैनीवाला बॉर्डर पर भी शाम को बीटिंग रिट्रीट' का आयोजन होता है, जिसमें दोनों देशों की सेनाएँ वीरता दिखाती हैं। हालांकि यहाँ हम पाकिस्तान के ज्यादा नजदीक थे।

दरअसल, वाघा में दोनों देशों के बीच कुछ मीटर खाली जमीन है, जिसे 'नो मेंस लैंड' कहा जाता है, जबकि यहाँ दोनों देशों को महज दो इंच मोटी एक रेखा अलग करती है। दो इंच की इस रेखा ने वाकई काफी कुछ बाँट दिया था। उस पार सैनिक चौकी पर जिन्ना की तस्वीर लगी थी, तो यहाँ महात्मा गाँधी की। उस तरफ की वर्दी सलेटी थी, तो यहाँ खाकी। हमारी घड़ी में शाम के 5:30 बज रहे थे, जबकि वहाँ 5:00। इसके अलावा सब-कुछ एक जैसा। वही लोग, वही भाषा, वही खेत, वही फसल, वही सतलुज, वही हवा। जिसका सपना हमारे महान क्रांतिकारियों ने देखा था। अचानक पाकिस्तानी रेंजरों और भारतीय बीएसएफ के जवानों के बूट जमीन पर पटकने का जोरदार सिलसिला शुरू हो गया और हम हकीकत में लौट आए। इधर हम थे और लकीर के उस पार पाकिस्तानी!

भाई का दर्द (II)

–वरुण वागीश

कोई दसेक साल पहले की बात है। हम सहारनपुर में 'भगत सिंह निवास' में शहीद–ए–आज़म के छोटे भाई कुलतार सिंह के साथ बैठे हुए थे। उनसे बातचीत शुरू हुई तो लाहौर जेल का 1931 का वह नजारा सामने आ गया, जब कुलतार और भगत सिंह की आखिरी मुलाकात हुई थी। बतौर कुलतार सिंह, शहीद–ए–आज़म (कुलतार भगतसिंह का नाम नहीं लेते थे) फाँसी की सजा मिलने के बाद भी घबराए हुए नहीं थे। बल्कि वह तो मुझे हौंसला दे रहे थे कि तुम हिम्मत मत हारना और माँ का ख्याल रखना।

कुलतार सिंह एक बार सहारनपुर से विधायक भी बने और वे नारायण दत्त तिवारी की सरकार में खाद्य आपूर्ति मंत्री थे, लेकिन राजनीति उन्हें रास नहीं आई। उन्होंने बताया, 'राजनीति में इतना भ्रष्टाचार देखा और जब खुद को बेबस महसूस करने लगा तो राजनीति से अलग होना ही बेहतर समझा।

कुलतार सिंह के मन में कसक थी कि 23 साल की उम्र में अंग्रजों की सरकार की नींव हिलाने वाले भगत सिंह को सरकार से उतना सम्मान नहीं मिला, जिसके वह हकदार थे। उनका कहना था, 'काँग्रेस ने जिस तरह गाँधी–नेहरू को सम्मान दिया, उसका एक–चौथाई भी शहीद–ए–आज़म को नसीब नहीं हुआ।' इस मुलाकात के कुछ दिनों बाद ही कुलतार सिंह ने चंडीगढ़ के एक हॉस्पिटल में आखिरी साँस ली।

विडंबना देखिए कि आखिरी दिनों में भी किसी बड़े नेता ने हॉस्पिटल जाकर भगत सिंह के भाई से मिलना जरूरी नहीं समझा।

मुझे गर्व है कि मैं 'इण्डियन' नहीं हूँ

–हेमचन्द्र बहुगुणा 'अजय'

ऑक्सफोर्ड की पुरानी डिक्शनरी में 'इण्डियन' शब्द का अर्थ कुछ अलग ही था। लैटिन एनडिपो से इण्डियन शब्द की उत्पत्ति हुई। 'इण्डियन' का शाब्दिक अर्थ है 'जिस दंपत्ती का विवाह चर्च में न हुआ हो, उनसे उत्पन्न नाजायज संतान' अर्थात् बास्टर्ड या फिर हरामी।

अपने दैनिक व्यवहार में अंग्रेजी का प्रयोग करते-करते यदा-कदा हम बड़े गर्व से स्वयं को 'इण्डियन' कह देते हैं। हमारा संविधान भी हमारे देश के 'इण्डिया' होने का समर्थन करता है। भारतीय संविधान की प्रस्तावना में स्पष्ट किया गया है कि **इंडिया दैट इज भारत।**

लोकतंत्र में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता होती है और भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र है। संविधान द्वारा प्रदत्त इसी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को मर्यादा में रहते हुए ही मुझे ऊपर उल्लेखित वाक्यांश से सहमति नहीं है। 'इण्डियन' और इण्डिया शब्द का मूल शाब्दिक अर्थ समझने के बाद अधिकांश पाठक मेरी बात से सहमत होंगे ऐसा मेरा विश्वास है।

उत्तरं यत् समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम्।
वर्षं तद् भारतं नाम भारती यत्र सन्ततिः।।

अर्थात् हिन्द महासागर के उत्तर में तथा हिमाचल के दक्षिण में स्थित महान देश भारतवर्ष के नाम से जाना जाता है और यहाँ का पुत्ररूप समाज भारतीय है। 'इंडिया दैट इज भारत' के स्थान पर अगर भारत दैट इज इण्डिया होता तो वह कुछ हद तक स्वीकार्य हो भी सकता था, लेकिन सहस्राब्दियों से 'भारत' नाम से सुविख्यात इस राष्ट्र को अंग्रेजों ने जिस तरह 'इण्डिया' घोषित किया उसे बिना सोचे समझे हम भारतीयों ने स्वतंत्रता के बाद भी अपनाये रखा।

भारत के लोगों की अलग विवाह पद्धति थी। भारत में हिन्दू धर्मावलम्बी होने के कारण भारतीयों का चर्च से कोई काम नहीं था और उनके विवाह चर्च में होने या न होने का तो प्रश्न ही नहीं उठता।

भारतीयों का विवाह ईसाई पद्धति व चर्च में न होने के कारण अंग्रेजों ने उन्हें नाजायज संतति मानते हुए 'इण्डियन' शब्द से सम्बोधित किया और उनके रहने के स्थान को 'इण्डिया' कहा। अंग्रेजी भाषा के व्याकरण के अनुसार किसी व्यक्ति अथवा स्थान का नाम परिवर्तित नहीं किया जा सकता है। उदाहरण के लिए इन पंक्तियों के लेखक का नाम हेमचन्द्र बहुगुणा है। हेम का अर्थ सोना होता है चन्द्र अथवा चन्द्रमा अगर यह नाम अंग्रेजी में अनूदित किया जाये तो यह होगा गोल्ड मून जिसे अंग्रेजी व्याकरण कभी स्वीकार नहीं करेगा। हिन्दी का हेमचन्द्र अगर अंग्रेजी में हेमचन्द्रा ही रहता है तो आप स्वयं सोचिये हिन्दी का भारत अंग्रेजी में भारत न होकर इंडिया कैसे हो गया। यह सब अंग्रेजी शासकों की जातीय वैमनस्यता और घृणा का परिणाम है। जहाँ-जहाँ अंग्रेजों का शासन रहा वहाँ के नाम उन्होंने इण्डियन शब्द से मिलते-जुलते ही रखे। जैसे वेस्टइण्डीज, इण्डोनेशिया, इण्डोचायना आदि। अमेरिका के मूल निवासियों को उन्होंने 'रेड इण्डियन' कहा क्यों उनका रंग लाल था। बाद में विवाद से बचने के कारण नए संस्करणों से 'इण्डियन' शब्द का पुराना अर्थ हटाकर उसे सिंन्धु-इण्डु-इण्डिया से जोड़कर दिखाना प्रारंभ कर दिया। शब्दों में बड़ी शक्ति होती है। इसके परिणाम दूरगामी होते हैं। ब्रिटेन में वहाँ के नागरिकों को 'इण्डियन' कहना कानूनी अपराध है। इसके लिए छह माह की सजा का प्रावधान है। जबकि हम भारतीय स्वयं को इण्डियन कहकर गौरवान्वित होते हैं। आइए संकल्प करें कि हमारा देश 'इण्डिया' नहीं भारत है और हम 'इण्डियन' नहीं भारतीय हैं।

महान स्वातंत्र्य सेनानी –स. अजितसिंह
(15 अगस्त जिनकी पुण्यतिथि है)

–विजेन्द्र सिंघल

ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द ने अपने चिन्तन और दर्शन से जिस वैचारिक क्रान्ति का सूत्रपात किया था, उससे प्रेरित होकर पंजाब की बलिदानी धरती में जो लोग स्वाधीनता की राह के राही न बने थे, उनमें देवतास्वरूप भाई परमानन्द तथा सरदार अजितसिंह सरीखे पुण्यात्मा अग्रगण्य थे। उन्होंने स्वदेश में ही नहीं अपितु विदेशों में भी स्वदेश की स्वतंत्रता के लिए अलख जगाई थी।

सरदार अजितसिंह के जीवन में यह अद्‌भुत प्रसंग भी घटित हुआ कि 15 अगस्त 1947 को रात्रि के बारह बजते ही जब मुल्क में आजादी की प्राप्ति की रस्म अदा होने लगी थी तो छियासठ वर्ष की आयु प्राप्त महान् क्रान्तिकारी सरदार अजितसिंह भी आकाशवाणी पर सत्ता परिवर्तन का आँखों देखा हाल सुन रहे थे। सत्ता परिवर्तन का वह वर्णन सुनते–सुनते शायद उनके मन में कुछ ऐसा भाव जगा कि उनका अखंड भारत की आजादी का सपना आंशिक तौर पर ही क्यों न हो, पूरा हो गया है। अपनी जर्जर काया का अहसास कर उन्होंने संभवतः यह भी अनुभव कर लिया था कि अब वह अपनी जीवन यात्रा को विराम लगा देने की स्थिति में आ गए हैं। उन्होंने अपने पारिवारिक जनों को अपने पास बुलाकर कहा कि "मेरा उद्देश्य एक सीमा तक पूर्ण हो गया, अब मैं जा रहा हूँ।" भारत की स्वतंत्रता के लिए इक्कीस वर्ष की युवा अवस्था में ही कर्मक्षेत्र में उतरा यह महान् सेनापति अमर हुतात्मा सरदार भगतसिंह का चाचा था।

पारिवारिक जनों ने जब सरदार अजितसिंह के मुख से उपरोक्त शब्द सुने तो उन्हें लगा कि शायद सरदार अजितसिंह का इरादा पुनः विदेश में जाकर अपने अधूरे सपने को पूर्ण करने के लिए सक्रिय होने का है। उन्होंने कहा कि अब आपका स्वास्थ्य यात्रा और प्रवास की अनुमति नहीं देता, आप कहीं यात्रा पर जाने की बात नहीं कीजिए।

क्रांतिकारी अजितसिंह की जीवन संगिनी भी अपने पतिदेव से पुनः यात्रा नहीं करने के आग्रह हेतु उनके कमरे में पहुँची। अजितसिंह के सामने जाकर वह खड़ी ही हुई थी कि वह बोले "देवी, मैंने तुमसे विवाह तो किया परन्तु तुम्हारे प्रति अपना दायित्व पूरा नहीं कर सका। मुझे क्षमा कर देना।" यह कहते-कहते अजितसिंह उठे और उन्होंने अपनी धर्मपत्नी के पाँवों को स्पर्श किया। पति-परायणा देवी ने तत्काल अपने पैर हटाए और बोली " मुझ पर पाप क्यों चढ़ाते हो?"

क्रांतिकारी ने अपने पाँव ऊपर किए और शय्या पर लेट गया। एक बार उसके कंठ से निनादित हुआ "भारत माता की जय" का स्वर और उसने अपने नेत्र सदैव के लिए मूँद लिए। तब पारिवारिक जनों को उनकी जाने के लिए कही गयी बात का मर्म समझ आया। मकसद एक हद तक पूरा हो जाने के उनके कथन का सार उन्होंने अनुभूत किया। सन् 1889 में तेईस फरवरी को जन्मे क्रांतिकारी सरदार अजितसिंह 15 अगस्त 1947 को खंडित ही सही स्वाधीन भारत में अपने जीवन का उद्देश्य बड़ी सीमा तक पूर्ण हो जाने पर, स्वातंत्र्य सूर्योदय की बेला में अपनी नश्वर काया को त्याग कर चिर विदाई ले रहे थे। उन्होंने यौवन की देहरी पर पग धरते ही स्वदेश की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष की राह

अपनाई थी। "भारत माता सोसाइटी" उनकी गतिविधियों का मंच बनी थी, जिस पर उनके बड़े भाई व महर्षि दयानन्द के निष्ठावान अनुयायी सरदार किशन सिंह और लाला हरदयाल, लाला पिण्डीदास सरीखे स्वातंत्र्य योद्धा उनके सहयोगी बने थे। वह किसानों के रहनुमा बनकर उभरे थे, तो सेना में भी उन्होंने बगावत के भाव जगाने में महती भूमिका निभाई थी तथा बंग भूमि के क्रान्तिधर्मियों तथा लोकमान्य तिलक से भी उन्होंने सम्पर्क सूत्र बढ़ाए थे। उनकी गतिविधियों से अंग्रेज सत्ताधीश काँप उठे थे और उन्हें भी बन्दी बनाकर लाला लाजपतराय के साथ मांडले के कारागार में डाल दिया गया था। अपने समय के वे ओजस्वी वक्ता थे। मांडले से रिहाई के बाद भारत के इस महान क्रांतिकारी ने सूफी अम्बाप्रसाद के साथ विदेश की राह ली थी। वे ईरान, तुर्की व जर्मनी तथा फ्रांस व स्विट्जरलैंड में वर्षों तक भारत की स्वतंत्रता के लिए अलख जगाते रहे। इटली में उन्होंने आजाद हिन्द फौज लश्कर का भी गठन किया था। इटली में आजाद हिन्द फौज की कमान सँभालने वाले नेताजी सुभाष से भी उनकी भेंट और विचार-विमर्श हुआ था। द्वितीय विश्वयुद्ध में जर्मनी और इटली की हार के बाद 2 मई, 1945 को सरदार अजीतसिंह को बंदी बनाए जाने के बाद यातनागृहों में अमानवीय यातनाएँ झेलनी पड़ी थीं। ब्रिटेन के यातनागृहों में सरदार अजितसिंह की हालत मरणासन्न-सी हो गयी थी। तभी मार्च 1947 में अड़तीस वर्ष विदेशों में बिताने के बाद अजितसिंह पुनः पुण्यभूमि भारत के रजकणों को अपने मस्तक पर लगाने का मनोवांछित अवसर पा सके थे।

डी.एल.एफ. गुड़गाँव (हरियाणा)

मार्टिन लूथर बनाम दयानन्द

—फान् फाश्वेंनी

जब पश्चिमी विद्वानों ने भारत विद्या (इंडोलॉजी) का अध्ययन प्रारंभ किया, तो उन्होंने भारत के प्रसिद्ध महापुरुषों और ग्रन्थों के साथ यूरोप के वैसे ही प्रख्यात व्यक्तियों और ग्रन्थों का तुलनात्मक मूल्यांकन भी किया और इस क्रम में उन्होंने भारतीय नामों पर यूरोपियन नामों को आरोपित किया, जिससे भारतीयों की कुछ हीनता और यूरोपियनों की उनसे कुछ उत्कृष्टता भासित होती थी, फिर वास्तव में चाहे वे यूरोपियन भारतीयों से कितने ही हीन क्यों न रहे हों, उन्होंने कालिदास को भारत का शैक्सपीयर, वेद को हिन्दुओं की बाइबिल, चाणक्य को भारत का मैक्यावली, वाल्मीकि–व्यास को भारत के होमर, रामायण–महाभारत को भारत के इलियड–ओडिसी कह कर पुकारा, यद्यपि प्रायः ही उनमें भारतीय कहीं अधिक उत्कृष्ट ठहरते थे। इसी परम्परा में महर्षि दयानन्द को उन्होंने भारतीय मार्टिन लूथर (प्रोटैस्टैण्ट ईसाई सम्प्रदाय के प्रवर्तक और सुधारक) की संज्ञा दी, जबकि महर्षि की तुलना में लूथर कहीं भी नहीं ठहरते। इस उलटी उपमा का कारण भारत की गुलामी थी।

क. समानताएँ–

1. दोनों ने उस समय जन्म लिया जब कि देश भ्रमजल में फँसा हुआ था और मजहबी ठेकेदारों के पंजे में लोग फँस रहे थे, जो स्वयं दुराचारी हो गये थे।

2. लूथर ने पोप के आगे सिर झुकाने से इन्कार किया और दयानन्द ने पाषाण आदि बुतों के सामने सिर झुकाने से। दयानन्द ने पौराणिक मत का दुर्ग तोड़ना आरम्भ किया और लूथर ने पोप के बल को घटाने का यत्न किया। जैसे लूथर पोप का संशोधन करना चाहता था, वैसे ही दयानन्द ब्राह्मणों का सुधार करना चाहता था।

3. जैसे लूथर ने बादशाहों के प्रलोभनों की परवाह नहीं की, वैसे ही दयानन्द ने राजाओं के प्रलोभनों तथा धमकियों की परवाह नहीं की। दोनों ने कष्ट सहे। जैसे लूथर पर आक्रमण हुए वैसे ही दयानन्द पर भी।

4. दोनों ने अकेले ही कार्यक्षेत्र में युद्ध किया। दोनों पक्के सदाचारी थे। त्यागी, तपस्वी और सरल जीवन रखते थे। पैदल

चलकर काम करते थे।

5. दोनों ने पौराणिक दुर्ग को हिला दिया तथा दिमागी स्वतन्त्रता की लहर चलाई। दोनों ने 21 वर्ष की आयु में अपने घर को मृत्यु की चोट से त्यागा। लूथर ने अपने परम मित्र (अलकसीज़) की मृत्यु से और दयानन्द ने भगिनी तथा चाचा की मृत्यु से। लूथर ने तप करके मन को दृढ़ किया और अञ्जील का लातीनी अनुवाद (पाठ) किया। दयानन्द ने ज्ञान की जिज्ञासा से जंगलों में भ्रमण किया, विन्ध्याचल (पर्वत) पर कई पंडितों से योग सीखने का यत्न किया और वेदाध्ययन करने की अभिलाषा की। 30 वर्ष की आयु में दोनों का संकल्प तीर्थयात्रा से शुरु हुआ। लूथर रोम में और दयानन्द हरिद्वार में यात्रा को निकले, परन्तु दोनों निराश होकर लौटे। लूथर पोप के दुराचार तथा पादरियों के भ्रष्टाचारों से और दयानन्द साधुओं तथा पण्डों के दुराचारों से एवं यात्रियों के अन्धविश्वास से।

6. लूथर ने प्रोफेसर बनकर अपना स्वाध्याय जारी रखा, और दयानन्द ने विरजानन्द गुरु के चरणों में बैठकर अष्टाध्यायी पढ़ना आरम्भ किया। गुरु की अन्तिम शिक्षा यह थी कि जाओ, संसार में वेद का प्रचार करो, देश का उपकार करो, झूठे मत-मतान्तरों का अन्धकार दूर करो और देश को भ्रमजाल से छुड़ाओ। तत्पश्चात् 5 वर्ष दयानन्द ने आगरा, मथुरा तथा रियासतों में भ्रमण करके प्रचार किया। 1867 को हरिद्वार कुम्भ के मेले पर पाखण्ड खण्डिनी पताका गाड़ दी और सब पर विजय प्राप्त की। 43 वर्ष की आयु में उसने संशोधक तथा प्रचारक का कार्य प्रारंभ किया और पौराणिक धर्म को छिन्न-भिन्न करना आरम्भ किया, उधर लूथर ने 1517 में पोप की महाप्रबल शक्ति का मुकाबला शुरू किया। पोप का एक दूत विटनवर्ग में क्षमा-पत्र (Indulgences) बेचने आया और किसानों से कहा कि मुझे जितना रुपया दोगे, उतना ही नरक की आग से बचोगे। लूथर ने उस पर 65 शंकाएँ कीं और लिखकर चर्च के द्वार पर लगा दीं।

7. 1520 में पोप लुई दहम ने उसे विरादरी से खारिज करने का हुक्म जारी किया, परन्तु उसने इन धमकियों की परवाह न करके 1536 में प्रोटेस्टेन्ट पंथ की स्थापना की। यह संस्था उसके मरने के पश्चात् बिजली के समान फैली तथा

बढ़ी। उधर दयानन्द ने 1875 में आर्य समाज की स्थापना की। उस पर ब्राह्मणों तथा क्षत्रियों ने बहुत आक्रमण किये। कर्णवास का आक्रमण तथा उसके हाथ से शस्त्र का गिरना प्रसिद्ध है।

ख. लूथर तथा दयानन्द में भेद।

1. लूथर कुछ कायर था, अतः अपने सिद्धान्तों से डगमगा जाता था, परन्तु दयानन्द अपने वचन तथा कथन पर चट्टान के समान दृढ़ रहते थे।

2. लूथर बुद्धिमान होते हुए भी सख्त था, अर्थात् यदि उसके मन्तव्य के साथ कोई सहमत न होता, तो उसे नास्तिक कहकर, उससे घृणा करता, परन्तु दयानन्द अपने मन्तव्य को किसी पर ज़ोर से ठोंसना नहीं चाहते थे। वह अपनी प्रबल युक्तियों से दूसरों को कायल करते तथा अपने से सहमत बनाते थे।

3. लूथर ने केवल कैथोलिक मत की कुरीतियों को दूर करने के लिये यत्न किया, परन्तु दयानन्द को अनेक मत-मतान्तरों के विरुद्ध तथा सामाजिक कुरीतियों का संशोधन करने के लिए कष्ट उठाना पड़ा।

4. लूथर ने यूरोप की सभ्यता में परिवर्तन किया, पर दयानन्द का कथन था कि भारत की प्राचीन सभ्यता की ओर चलो, वेदों की ओर वापिस लौटो, झोंपड़ियों तथा सादगी की ओर लौटो, किन्तु लूथर वर्तमान समय की पश्चिमी सभ्यता का अगुआ था और दयानन्द भारत की वर्तमान जातीय जागृति का नेता था।

5. लूथर सर्वदा रोगग्रस्त और दुबले-पतले शरीर का था, परन्तु दयानन्द हृष्ट-पुष्ट और रोगरहित था। लूथर-कुरूप, भद्दा था, परन्तु दयानन्द सुडौल, तेजस्वी और प्रतापी था।

6. लूथर का सहायक तथा रक्षक सैक्सानी का बादशाह था, दयानन्द का सहायक कोई राजा या अन्य धनाढ्य पुरुष न था।

7. लूथर केवल धार्मिक संशोधक था, परन्तु दयानन्द धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक और शिक्षा-प्रणाली का संशोधक था।

8. दोनों ने उस समय आवाज़ उठाई, जब छोटी जातियों तथा अशिक्षित लोगों पर अत्याचार हो रहे थे, जबकि लोग ईश्वरीय पूजा से विमुख होकर पोपाडम्बर के गढ़े में पड़े हुए थे। दोनों ने ज्ञान के प्रकाश का लैम्प हाथ में लिया। एक ने 16वीं

शताब्दी में और दूसरे ने 19वीं शताब्दी में।
9. दयानन्द ने वेद को विज्ञान विद्या (साईंस) तथा तत्वज्ञान (दर्शन) की चट्टान पर दृढ़ कर दिखाया तथा वर्तमान समय के विद्वानों के सन्मुख युक्ति और बलपूर्वक अपने धर्म को प्रकट किया, परन्तु लूथर बाईबिल के बुद्धिविरुद्ध मिथ्या वचनों और विज्ञानविरुद्ध विचारों को दूर न कर सका। दयानन्द का सिद्धान्त बुद्धि की कसौटी पर परखा जा सकता है, परन्तु लूथर के विचारों का बुद्धि से सम्बन्ध नहीं था। दयानन्द का सिद्धान्त था ज्ञान तथा कर्म और लूथर का विश्वास था अन्धविश्वास। दयानन्द का धर्म (नेशन ऑफ फिलॉसफर्स) विचारवान् पुरुषों के लिए, एवं लूथर का अनपढ़ और दुर्बल विचारवाले पुरुषों के लिए था। दयानन्द संसार के सर्व मत-मतान्तरों में एकता लाना चाहता था, परन्तु लूथर केवल अञ्जील का संशोधन करना चाहता था।
यह है लूथर और दयानन्द का मुकाबला, जो एक निष्पक्ष विद्वान् ने जर्मनी में बैठे हुए किया था। इसी प्रकार फानग्लिम्फेथ ने भी स्वामी दयानन्द के विषय में अत्यन्त प्रशंसा प्रकट की है।
मार्टिन लूथर जर्मन प्रोफेसर था वह अतिबुद्धिजीवी था। यद्यपि वह मेधावी तथा तार्किक था, किन्तु वह 'बाईबिल' पर बहुत ही श्रद्धा रखता था। उसका चिन्तन दोहरा था। वह एक ओर ईसाई पादरियों के द्वारा धर्म के नाम पर लूट-खसोट, अन्धविश्वास तथा दान-दक्षिणा का घोर विरोधी था, तो दूसरी ओर बाईबिल में वर्णित विज्ञान-विरोधी तथ्यों को सिर-झुकाकर मानता था।

बाईबिल के परस्पर विरोधी वचन

बाईबिल में दो परस्पर विरोधी विचारधाराएँ विद्यमान हैं। सत्कर्म और मुक्ति के संबंध में सन्त का स्पष्ट मन्तव्य है कि "मुक्ति के लिए मनुष्य को अच्छे कर्म करने की आवश्यकता नहीं। केवल ईसा में विश्वास-मात्र करना ही पर्याप्त है। इससे ठीक विपरीत प्रेरित जेम्स का मत था कि मनुष्य का दर्जा या श्रेणी उसके कर्म से बनती है। केवल विश्वास या अन्धश्रद्धा से वह ऊँचा नहीं उठ सकता। परन्तु मार्टिन लूथर का कथन है कि-वह मनुष्य, जो यह कहता है कि बाईबिल के अनुसार मोक्ष के लिए अच्छे कर्म करना आवश्यक है, पूर्णतः असत्य

और झूठा है। यदि मनुष्य ईसामसीह में दृढ़विश्वास रखे तो उसको मोक्ष सुनिश्चित है, उसको कोई खतरा नहीं। चाहे वह व्यभिचार करे और दिन-रात हजारों हत्याएँ भी कर दे।'

बाईबिल कहती है, 'भलाई-बुराई, धर्म-अधर्म एवं कर्तव्य-अकर्तव्य के ज्ञान के वृक्ष का फल किसी को भी न चखना चाहिए।'

इस संसार की विद्या, ज्ञान आदि परमात्मा के दरबार में मूर्खता हैं। मार्टिन लूथर एक ओर बुद्धिजीवी होने का ढोंग कर 'पोपवाद' का विरोध करता है, तो दूसरी ओर ज्ञान, विज्ञान तथा बौद्धिक विकास का विरोध करने वाली बाईबिल को श्रेष्ठ बता कर उसे सिर पर रख कर चौराहों पर नाचता था।

नारी जाति के साथ अत्याचार

ईसाइयों द्वारा अपने से भिन्न विचार रखने वाले गैर-ईसाइयों को, जिनकी संख्या 3 लाख से भी अधिक मानी गई है, जिन्होंने बपस्तिमा लेने से इंकार कर दिया था, उन्हें जीते जी (जीवित) ही जला दिया गया। उनके द्वारा 300 वर्षों तक भली महिलाओं को 'जादूगरनी' कहकर जिन्दा ही जलाया जाता रहा। बाईबिल के अनुसार-"किसी जादूगरनी (भद्र महिला) को जिन्दा मत छोड़ो।" इसके अतिरिक्त अन्य स्थलों पर ऐसे ही घृणित विचार व्यक्त किये गये हैं। इन्हीं जादूगरनी (भद्र महिला) के प्रसंग में मार्टिन लूथर कहता है- "मुझे जादूगरों पर जरा भी दया नहीं। मैं चाहता हूँ, इन सबको जला दिया जाए।" जो ईसाई मत प्राणी मात्र पर दया का दिखावा करता है, वह कई दशाब्दियों तक 'नारी' में आत्मा नामक तत्त्व की विद्यमानता को स्वीकार नहीं करता था। यही कारण है कि ईसाइयों में कोई भी नारी 'पादरी' या धर्मोपदेशिका नहीं बन पाई। वे नारी को पाप का मूल कारण मानते हैं, उनका तिरस्कार करते हैं। इतना ही नहीं, मार्टिन लूथर बहुविवाह का समर्थक था। इतिहास के अनुसार हेनरी अष्टम को इसी ने बहुविवाह का परामर्श दिया था।

कोपरनिकस के संबंध में मार्टिन लूथर कहता है कि-वह महामूर्ख है क्योंकि हमारी बाइबिल में सूर्य को घूमता हुआ कहा गया है और पृथ्वी को स्थिर कहा गया है। पृथ्वी चटाई की तरह है। (जोशुवा 10/12/13)

सुदामा नगर, इन्दौर-452009 (म.प्र.)

The Horried Massacre of Hindus and Sikhs in Pre-Partition India

-N.K. Chowdhry

As long as Muslims consider Jihad as a weapon to spread Islam sanctified by their religion they will remain deprived of their human strings of compassion for fellow human beings. Repeated attacks on India's defense establishments and planned programmes to kill Hindu and Non-Muslim Indians by Pakistan sponsored terrorists are not the handiwork of non-state actors. These are the outcome of the core guiding philosophy of the Islamic state of Pakistan. Peace overtures from India have never helped in the past as would be clear from a flash back to the role of Muslims seventy year back in undivided India. The recent terrorist attacks are just a continuation of what had started seventy years ago.

The Second World War had come to an end in the year 1945. In Britain, the Labour Party came to power under the leadership of Lord Clement Attlee. In India, the strong public reaction to the INA trials and the Naval Mutinee had convinced the British government that it was no longer possible to keep India under colonial rule. The British Government had made up its mind to grant Independence to India.

In the backdrop of the British leaving India, Muslims suddenly realized that cohabitation with kafirs is 'haram' by Islamic standards; Hence Muslims should fight to get their own dar-ul-Islam of Pakistan.

The name of Pakistan means "land of pure Pak people." Pak people are the Muslims, whereas Na-Pak people are the dirty kafirs (infidels), namely-Sikhs and Hindus.

Since living with Hindu and Sikh kafirs would lead to 'persecution of Muslims', killing kafirs to force them to accept Pakistan was declared to be morally justified.

Mohammed Ali Jinnah, the supreme leader of the Muslim League declared that the Hindu Congress would never agree to a separate homeland for Muslims by constitutional means. As such Muslims had to resort to Direct Action.

The Quran has verses calling for the slaughter of infidels. Kafir Ko jahan pao qatal karo ta ke mitey kufr duniya se aur rahe nam Allah ka. so it was considered to be islamic duty for Muslims to kill infidels (and all others who did not accept Mohammed as the prophet and messenger of Allah).

In August 1946, on the 18th of Ramadan, Indian Muslims responded to Jinnah's call for Direct Action leading to mass slaughter of Hindus and Sikhs. The massacre started from Calcutta with a view to terrorize the Hindus to accept Pakistan just like their Prophet in the Battle of Badr.

The Muslim slogans while slaughtering infidels used to be "Maar-keLenge Pakistan, Mar-ke-Lenge Pakistan, LekeRahenge Pakistan, Nara-e-Takbeer! Allah U-Akbar!"

Based on the historical timeline of events leading to Partition, it is clear that it was the Muslims League under the leadership of Mohammed Ali Jinnah started killing the Sikh and Hindus to terrorize them intc accepting Pakistan.

To achieve their dream of dar-ul-Islam of Pakistan, Muslims committed unprovoked brutal and horrendous acts of killing Hindus and Sikhs starting August 1946, on the day of the Muslim holiday of Friday, The first riots were instigated by Muslim in Calcutta and other parts of Bengal. The brutal killings were then extended to Punjab where Muslims were in majority. The victims of the horrid massacre were the Hindus and Sikhs.

The idea of committing voilence upon Hindus and Sikhs was to not only terrorize them to leave the regions demanded as Pakistan but to also clear these infidels from the 'pure land' of Pakistan to gain a 100% Muslim majority.

During the period 1946-47, well before the Partition of India, besides large scale massacres, women in Western Punjab were subjected to gang rape, followed by writing 'Allah-u-Akbar" on their chests, and then brutally killing them.

A million Sikhs and Hindus were murdered in cold blood at the hands of Muslims during the partition of India. Since the advent of Islam in India, more than 80 millions Indians (Hindus, Buddhists and Sikhs) have been slaughtered by Muslims in

various capacities according to their power.

Why Such Barbarity?

The answer is that the role model for Muslims is some who would set an example of "jihad victory with terror"...

Muslims radicals today are merely following what they believe is sanctified in their religious scripture. The believers (Muslims) can justifiably slaughter infidels until they accept Islam or make them pay jizya tax if the slaughter of infidels is not yet possible.

The Bible had preached that the Earth was stationary and the Sun revolved around it. During his life time, Galvin Galileo was punished for having contradicted this statements. However during the twentieth century, the Christians accepted the mistake and made amendments accordingly.

A number of Islamic states and countries with majority population comprising Muslims have amended their customary laws that were sex discriminatory. But in India, the die hard Maulvis insist that what is written in Quran or the Hadis is not subject to any modification or amendment.

What was considered correct in Arabia many centuries ago, must continue to prevail in secular societies even in the 21st century. Secularism thus has no place in Darul Islam. As long as Muslims consider Jihad as a weapon to spread Islam which is sanctified by their religion they will remain deprived of their human strings of compassion for fellow human beings.

Pakistan is close to getting 100% Muslim majority by the continuous slaughter and abduction of non-Muslims. In secular India, Muslims have not only a faster growth rate than Hindus and Sikhs; but are given constitutional rights and a separate Sharia code of law. So much for the Directive Principles of Constitution of India that stands for a Common Civil Code for all Indian citizens (irrespective of their religious faith).

Is Rebirth Fact Or Fiction?
Only investigation can tell,

A well-known professor in an Indian university who is conducting research on rebirth came to meet me. At the very start of his conversation, he asserted that he was going to prove the theory of rebirth scientifically. It was apparent that his mind was already made up in favour of rebirth and he was looking for scientific evidence to support it. But it was utterly unscientific to accept something before fully investigating it from all sides. If someone wants to be scientific, he should say that he wants to enquire whether the theory of reincarnation is true or not.

Importence Of Logic

If you want to prove the theory of rebirth, you can find any number of arguments in its favour. Philosophy has been debating this question for more than 5,000 years and nothing has been solved yet. There are people who believe in rebirth and there are equal numbers who don't believe in it. And no side has been able convince the other side of the validity of its standpoint.

It is ironical that you can convince only one who is already convinced; you cannot convince the unconvinced. This is importance of logic, which it fails to see. You can easily convince a Hindu of the truth of rebirth, because it is part of his belief system. But you will know how importent logic is when you try to convince a Muslim of the truth of this theory.

Logic is a skill which works well for those who use it to prove something which they believe to be true. Therefore, it is not a right question to ask if rebirth can be proved philosophically.

The right question is, "Is there a way to approach the question of rebirth scientifically?"

Science is pure enquiry; it is objective and impartial. While philosophy and logic have their stand points for or against a belief, a proposition, science has none. A scientific mind means that it is open and impartial; it wants to find the truth, it is open to both the alternatives, both sides of a things; it is not closed. Science does not depend on belief. It wants to investigate into the truth or otherwise of a hypothesis.

Objective Enquiry

Science is the only discipline prepared to re-examine its own findings and conclusions. Science is prepared for any possibility that an objective enquiry and investigation can lead to. Science has only recently begun to take interest in matters like reincarnation.

It is only 50 years since psychic societies came into being in America and Europe, and they have done some good work in this direction. A handful of intelligent people with a scientific bent like Oliver Lodge, Board, and Rhine have explored new frontiers of a human mind. They are all men of scientific persuasion; they don't have any beliefs and prejudices of their own. They have done some real work on life after-death and incarnation. Their findings are authentic and they go along way in support of reincarnation. Now there are scientific technigues to contact bodiless souls, and they have been taken to eliminate the chances of deception and frauds in the use of these techniques.

In the past, there have been many cases of fraudulents seances to communicate with the dead. But if even a single case of authentic necromancy succeeds, it is enough. And many such experiments to contact bodiless spirits have been successful in establishing that souls change their bodies; that they are born again and again.

Contacting Spirits

A number of people who had devoted their lives to necromancy before leaving their bodies, had promised to their phychic societies that they would communicate with them after death, in a specific manner. And some of them did succeed in their efforts. They communicated some very valuable information regarding the life-after-death phenomenon to their societies, and this information goes a long way in the support of rebirth.

शोक–संदेश

अजिता पुरंग का अमेरिका में मरणोपरान्त देहदान। यह देश और दुनिया के लिए प्रेरक उदाहरण है।

आर्य परिवार के डॉ. विश्वभूषण पुरंग की पुत्री अजिता पुरंग (शाह) ने मृत्यु के बाद देहदान करने का संकल्प किया था। हाल ही उसकी मृत्यु अचानक ब्रेन हेमरेज से हो गई। मरणोपरान्त शरीर के सभी उपयोगी अंगों के दान से 25–30 मरणासन्न रोगियों को जीवन मिल गया। इस तरह वह मरकर भी अमर हो गई। अजिता की माता श्रीमती प्रेम पुरंग भी भिलाई से न्यूजर्सी पहुँच गईं। इस अवसर पर वहाँ संवेदना प्रकट करने के लिए शताधिक भारतीय व स्थानीय परिवारी जन और मित्रगण उपस्थित थे। वहाँ यज्ञ–हवन और शोक सभा के पश्चात् विद्युत शवदाह–ग्रह में अजिता का अन्तिम संस्कार कर दिया गया।

छत्तीसगढ़ के मुख्यमंत्री डॉ. रमण सिंह ने अपने शोक–संदेश में कहा कि छत्तीसगढ़ की पुत्री अजिता ने अमेरिका में मरणोपरान्त देहदान करके देश और विश्व के सामने प्रेरणादायक उदाहरण प्रस्तुत किया है।

अजिता पुरंग ब्रह्मापण के संपादक डॉ. भारतभूषण विद्यालंकार की भतीजी थी। ब्रह्मार्पण परिवार के सभी सदस्य अजिता पुरंग के शौक–संतप्त परिवार के प्रति संवेदना प्रकट करते हैं और दिवंगत आत्मा की सद्गति के लिए प्रार्थना करते हैं।

Date of Pubn. : 31.03.2016 Posted at - NIE - H.O. Postal Date : 2-3 Apr. 2016
RNI Reg. No. DELBIL/2007/22062 Postal Regd. No. DL(W) 10/2143/2014-2016

छिद्रं चक्षुषो हृदयस्य मनसो वातिं तृण्णं बृहस्पतिर्मे तद्दधातु।
नो भवतु भुवनस्य यस्पतिः।। यजु. 26/2।।

ऋषि-दध्यङ्ङाथर्वणः, देवता-बृहस्पतिः, छन्द-पंक्तिः

अर्थ- हे परमेश्वर! आप बड़े हैं अतः आप मेरे चक्षु, हृदय (प्राणात्मा) मन, बुद्धि, विज्ञान, विद्या और सब इन्द्रियों के छिद्रों में जो निर्बलता-रागद्वेष, चंचलता या मन्दता आदि विकार हैं इनका निवारण करके सत्यधर्मादि में प्रवृत्त करें। आप सब भुवनों के स्वामी हैं इसलिए हमारी प्रार्थना है कि आप हम पर कृपा दृष्टि रखें। हे प्रभु! आपके सिवाय हमारा कोई कल्याणकारी नहीं है।

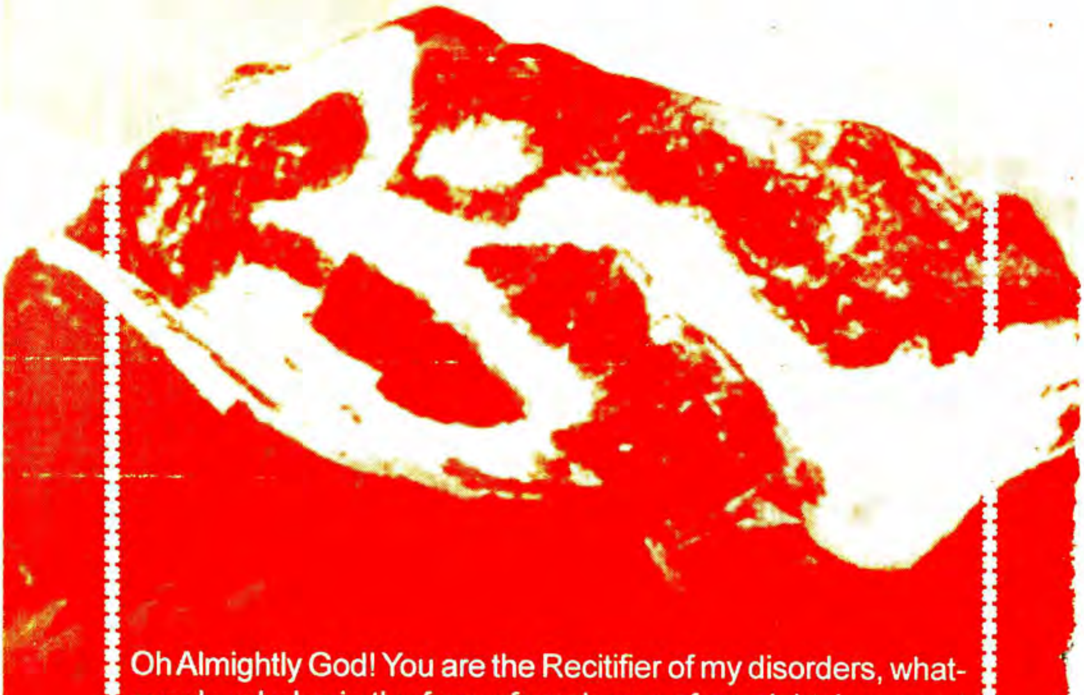

Oh Almightly God! You are the Recitifier of my disorders, whatever loopholes in the form of weakness of my sight, heart and mind which has grown very noisome, may God, the Lord of all great things remove those loopholes of mine. He who is the Master of the whole universe may He be auspicious to us.

ऋषि-दध्यङ्ङाथर्वणः, देवता-बृहस्पतिः, छन्द-पंक्तिः

Printed by - Friendsprintofast, New Delhi-58